PRACTICE PAPER-1 (SOLUTIONS)

CLASS: XII

SUBJECT : HINDI

खंड-अ

1. **1.** (अ) गतिशील
2. (ब) स्थायी
3. (ब) कविता का
4. (ब) समय और कविता दोनों ही प्रगतिशील हैं।
5. (स) केवल पदार्थों का
6. (द) उपर्युक्त सभी का
7. (स) चित्रकला का
8. (अ) पदार्थों को
9. (स) पदार्थों का चित्रण चित्रकला का काम है, कविता का नहीं
10. (अ) काव्य कला में

2. **1.** (अ) अपना वर्चस्व फ़ैलाने के लिए
2. (द) उपर्युक्त सभी
3. (द) उपर्युक्त सभी
4. (अ) सफ़ेदपोश लुटेरों के लिए है
5. (स) ताक़त और उत्साह से

अथवा

1. (अ) पहाड़ जैसी विशालकाय
2. (ब) बड़ का झाड़
3. (अ) परिवार का अंग
4. (द) गहरी चिन्ता रखते ही हैं और जड़ समान सभी डालियों को सींचते भी हैं।
5. (स) क्लेश

3. **1.** (अ) जनसंचार
2. (द) उपर्युक्त तीनों

4. **1.** (स) बच्चे को
2. (अ) गोद में लिए झूला रही है
3. (अ) हवा में
4. (स) माँ–बच्चे दोनों का
5. (ब) फिराक गोरखपुरी

5. **1.** (ब) जातिवाद के समर्थकों के लिए

2. (अ) श्रम विभाजन का

3. (स) श्रमिक विभाजन का

4. (द) जाति प्रथा और श्रम विभाजन

5. (अ) भीम राव अम्बेडकर

6. **1.** (अ) अहिंसा के पुजारी थे

2. (स) पिताजी की

3. (द) नकलची

4. (ब) किशन दा को

5. (अ) पढ़ाई से हटा कर खेती के काम मे लगाना

6. (अ) चौथी

7. (द) उपर्युक्त सभी कारणों से

8. (ब) सिंधु नदी

9. (स) ताम्रकालीन

10. (ब) मुरदों का टीला

खंड-ब

7. **(अ)** परीक्षा प्रत्येक प्रकार की शिक्षा के लिए अनिवार्य है। बिना परीक्षण के कोई वस्तु प्रयोग में नहीं लाई जाती अथवा वस्तु का महत्व नहीं जाना जा सकता और न ही उसका परिणाम जाना जा सकता है। बिना परिणाम के उसकी लाभ–हानि नहीं निकाली जा सकती। इसलिए वस्तु को प्रयोग में लाने से पूर्व परीक्षण किया जाता है। यही बात प्रत्येक परीक्षा पर लागू होती है। परीक्षा के बिना शिक्षा का मूल्यांकन नहीं किया जा सकता और न स्तर ज्ञात किया जा सकता है।

परीक्षा को बहुत कठिन मानकर विद्यार्थी भयभीत होता है। वह सोचता है कि परीक्षा आ रही है, अब क्या होगा ? पर यह बात प्रत्येक विद्यार्थी पर लागू नहीं होती। जो विद्यार्थी प्रारंभ से ही सुचारु रूप से अध्ययन करते हैं, उनके सामने यह समस्या नहीं आती। परीक्षा समस्या उन विद्यार्थियों के लिए है, जिनका मन कहीं और होता है तथा आँखें किताब पर टिकी होती हैं। ऐसे विद्यार्थी को पाठ किस प्रकार याद हो सकता है? परीक्षा की तैयारी तो नए सत्र के आरंभ से ही योजना बनाकर शुरू कर देनी चाहिए।

हर कक्षा का पाठ्यक्रम कक्षा के स्तर के अनुसार बोर्ड या विश्वविद्यालय बनाता है। इसको आधार बनाकर शिक्षक विद्यार्थी को परीक्षा हेतु शिक्षा देता है। विद्यार्थी को चाहिए कि वह हर रोज अपने कक्षा–कार्य व गृहकार्य को याद करता रहे। ज्यों–ज्यों पाठ्यक्रम पढ़ाया जाए, अगला पाठ याद करने के साथ–साथ पिछले पाठों की दोहराई भी नियमित रूप से करता रहे। कक्षा में पाठ को ध्यानपूर्वक सुनें, घर पर इसका अध्ययन करके स्मरण करें।

विद्यार्थी को चाहिए कि वह प्रतिदिन प्रातःकाल उठकर पूर्व पढ़ाए गए पाठ का स्मरण करे और पढ़ाए जाने वाला पाठ पढ़कर जाए। इस प्रकार के अध्ययन करने वाले विद्यार्थी को पढ़ाया गया पाठ शीघ्र समझ में

आता है। समय–समय पर लिखकर भी इसका अभ्यास करना चाहिए। इस प्रकार के अभ्यास से परीक्षा में लिखने की तैयारी हो जाती है। लिखते समय प्रश्न संतुलन का भी ध्यान रखना चाहिए जिससे समय से सभी प्रश्नों का समुचित उत्तर दिया जा सके।

'ज्यों–ज्यों भीजें कामरी, त्यों–त्यों भारी होय 'अर्थात जो छात्र ऐसा नहीं करते, वे अध्ययन सुचारु रूप से नहीं करते उन्हें धीरे–धीरे पाठ्यक्रम पहाड़–सा लगने लगता है। वे असफल हो जाते हैं और अपना जीवन कष्ट में डाल देते हैं। अतः विद्यार्थी को चाहिए कि वे नियमबद्ध होकर परीक्षा की तैयारी करें। परीक्षा किसी भी प्रकार की हो, उससे कभी भयभीत नहीं होना चाहिए।

(ब) शिक्षा के बिना व्यक्ति का जीवन अधूरा होता है। किसी ने ठीक कहा है–'बिना पढ़े नर पशु कहलावै' अक्षरश: सत्य है। अच्छाई– बुराई का निर्णय शिक्षित व्यक्ति ही ले पाता है। शिक्षा प्राप्त करना प्रत्येक मनुष्य का जन्मसिद्ध अधिकार है। मनुष्य से हमारा तात्पर्य पुरुष एवं नारी दोनों से है। विशेष रूप से समाज में नारी जगत की अनदेखी प्रारंभ से ही की जा रही है। इसका कारण उनकी अशिक्षा रही है। उन्हें घर की चारदीवारी में बंद करके मात्र सेविका अथवा मनोरंजन का साधन समझा जाता रहा है। इसका परिणाम यह हुआ कि नारी हर क्षेत्र में पिछड़ गई। नारी सबको जन्म देने वाली है।

अतः उस पर सब तरह के प्रतिबंध लगाना पूर्णतया अनुचित है। प्रतिबंध लगाने वाले यह भूल जाते हैं कि बालक पर नारी के संस्कारों का प्रभाव प्रत्यक्ष रूप से पड़ता है। नारी के गुणों का समावेश किसी–न–किसी रूप में बच्चे में होता है। फलतः परिवार का संपूर्ण विकास नारी पर निर्भर होता है। अतः नारी का शिक्षित होना अति आवश्यक है। हालाँकि नारी को शिक्षा प्राप्त करने का अधिकार वैदिक काल में था। अनेक सूक्तों में महिला रचनाकारों का नाम मिलता है। वेद व पुराणों में स्पष्ट कहा गया है कि नारी के बिना पुरुष कोई भी कार्य संपन्न नहीं कर सकता।

महाभारत, रामायण आदि महाकाव्यों से पता चलता है कि नारी ने विजय प्राप्त करके धर्म की स्थापना में सहयोग दिया है। फिर भी मध्यकाल में नारियों पर नाना प्रकार के प्रतिबंध लगाए गए। हालाँकि आजादी के संघर्ष में भी नारियों ने कंधे–से–कंधा मिलाकर पुरुषों का साथ दिया। आज नारी जाग्रत हो चुकी है। नारी जाति की जागृति देखकर ही पुरुष को विवश होकर उसके लिए शिक्षा के द्वार खोलने पड़ रहे हैं। आज सरकार भी नारी–शिक्षा के लिए प्रयासरत है। सरकार अपने स्तर पर गाँव–गाँव में स्कूलों व कॉलेजों की स्थापना कर रही है तथा नारी–शिक्षा को बढ़ावा देने वाली संस्थाओं को अनुदान देती है। आज मुक्त कंठ से कहा जा रहा है।

'पढ़ी–लिखी लड़की, रोशनी घर की।'

नारी–शिक्षा का ही परिणाम है कि आज प्रत्येक विभाग में नारी को स्थान मिल रहा है और वे उत्तम कार्य करके अपनी कार्यकुशलता का परिचय दे रही हैं। शिक्षित लड़कियाँ घर की जिम्मेदारियों का निर्वाह कर रही हैं। इससे दहेज–समस्या, पर्दा–प्रथा, शिशुहत्या आदि कुप्रथाओं में भारी कमी आई है। निष्कर्षतः हम कह सकते हैं कि नारियों को साथ लिए बिना देश का पूर्ण विकास संभव नहीं। इस विकास में एक कमी यह है कि नारी अभी भी पूरे देश में समग्र रूप से शिक्षित नहीं हो रही है। क्षेत्रों में शहरों की तुलना में काफी पिछड़ापन है। अतः नगरों के साथ–साथ ग्रामीण क्षेत्रों में नारियों की शिक्षा पर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है।

(स) सहशिक्षा आधुनिक युग की देन है। आज का विचारक स्त्री–पुरुष के बीच प्राकृतिक भेद तो स्वीकार करता है, परंतु उस भेद को इतना गहरा नहीं मानता कि एक पक्ष को चारदीवारी में बंद कर दे तथा दूसरे को संपूर्ण सामाजिक जिम्मेदारियाँ सौंपकर निश्चित हो जाए। पुराने जमाने में नारी को शिक्षा केवल धार्मिक स्तर की दी जाती थी, परंतु समय बदलने के साथ समाज में भी परिवर्तन आया। नारी और पुरुष के बीच धीरे–धीरे एक सहयोग भावना का जन्म हुआ।

आज सहशिक्षा एक विद्यमान सत्य है, इसलिए उसकी आवश्यकता और अनावश्यकता पर विचार करने का प्रश्न उतना चिंतन का नहीं है, जितना पहले कभी था। आज यह प्रश्न है कि–इस सहशिक्षा से वे उद्देश्य पूर्ण हुए या नहीं जिसके लिए उसे शुरू किया गया था? निःसंदेह सहशिक्षा ने हमारे मनों को उदारता दी है। लड़के–लड़कियाँ आपस में बोलने, आने–जाने व विचारने में अब नहीं शरमाते। उनका आत्मविश्वास बढ़ा है। दूसरी तरफ लड़कों के भीतर नारी के प्रति कौतूहल भी प्रायः शांत हुआ है। उनके अंदर दंभ का विस्फोटक भी बुझ–सा गया है।

सहशिक्षा के प्रति सामाजिक दृष्टिकोण में भी बदलाव आया है। अब लड़के–लड़की को साथ देखकर 'हाय–तौबा' नहीं मचती। इसके अतिरिक्त, कक्षा के माहौल में सुधार हुआ है। लड़के व लड़कियों को वेश–भूषा व वाणी पर संयम रखना पड़ता है। उन्हें अपमानित होने का भय हमेशा रहता है। यह आत्म–सजगता उन्हें जीने की मर्यादा का पहला पाठ पढ़ाती है।

अध्यापक को लड़के–लड़कियों को पढ़ाने के लिए एक संयम का निर्वाह करना पड़ता है ताकि कक्षा की मर्यादा न टूटे। यह संयम विषय की रोचकता को कम नहीं करता, बल्कि उसे और उपयोगी व सरल बना देता है। सहशिक्षा के कारण ही नारी हर तरह के कर्मक्षेत्र में कार्य करने में सक्षम हो सकी है। इसका तात्पर्य यह नहीं है कि सहशिक्षा के दुष्परिणाम नहीं हैं। सहशिक्षा ने लड़कों व लड़कियों में आत्मप्रदर्शन की भावना भर दी है।

सहशिक्षा का सबसे बड़ा नुकसान है–उत्तरदायित्व का। समाज में पुरुष व नारी के उत्तरदायित्व अलग–अलग निर्धारित थे। लड़कियों को घर व्यवस्थित करना होता था तो पुरुष को बाहय संघर्ष झेलना होता था। दोनों के उद्देश्य अलग थे, परंतु सहशिक्षा द्विारा इस निर्धारित उत्तरदायित्व का क्रमशरू क्षरण हो रहा है। नारी का घर से बाहर निकल जाना आर्थिक स्वतंत्रता की दृष्टि से कितना भी महत्वपूर्ण क्यों न हो, सामाजिक संतुलन की दृष्टि से घातक सिद्ध हो रहा है।

निष्कर्षत: हम कह सकते हैं कि सहशिक्षा तभी प्रभावी हो सकती है जब हम पहले शिक्षा के सामान्य उद्देश्य में परिवर्तन करें। नारी के कोमल गुणों को सुरक्षित रखना होगा, अन्यथा समाज बिखर जाएगा। सहशिक्षा जीवन को विकास तभी देगी जब शिक्षा का उद्देश्य होगा–विवेक का विकास और राष्ट्रीय भावना की समृद्धि। जब तक शिक्षा ज्ञान और कर्तव्य को नहीं जोड़ती, तब तक वह शिक्षा नहीं हो सकती।

(द) वह राष्ट्र जिसमें हम बड़े होते हैं, शिक्षा पाते हैं और साँस लेते हैं–हमारा अपना राष्ट्र कहलाता है और उसकी सीमाओं में जन्म लेने वाले व्यक्तियों का धर्म, जाति, भाषा या संप्रदाय कुछ भी हो, आपस में स्नेह होना स्वाभाविक है। राष्ट्र के लिए जीना और काम करना, उसकी स्वतंत्रता के विकास के लिए काम करने की भावना 'राष्ट्रीयता' कहलाती है। किसी विशेष प्रकार की संस्कृति और धर्म को दूसरे पर आरोपित करने की भावना या धर्म अथवा संस्कृति के आधार पर पक्षपातपूर्ण व्यवहार करने की क्रिया सांप्रदायिकता है।

सांप्रदायिकता समाज में वैमनस्य पैदा करती है और सामाजिक या राष्ट्रीय एकता को क्षति पहुँचाती है। सांप्रदायिकता राष्ट्रीयता के लिए बाधक है क्योंकि राष्ट्रीयता की अनिवार्य शर्त है–देश की प्राथमिकता के लिए अपने 'स्व' को मिटाना। महात्मा गांधी, तिलक, सुभाषचंद्र बोस आदि के जीवन से पता चलता है कि राष्ट्रीयता की भावना के कारण उन्हें अनगिनत कष्ट उठाने पड़े। व्यक्ति को निजी अस्तित्व कायम रखने के लिए सभी पारस्परिक सीमाओं की बाधाओं को भुलाकर कार्य करना चाहिए तभी उसकी नीतियाँ–रीतियाँ 'राष्ट्रीय' कहलाने की भागीदार बन सकती हैं।

जबकि सांप्रदायिकता के फलस्वरूप एक संप्रदाय या धर्म वाला दूसरे संप्रदाय या धर्म की न केवल निंदा करता है, अपितु अपने धर्म को बेहतर सिद्ध करने के लिए दूसरे के विरुद्ध दलबंदी भी करता है। वह दूसरे मतावलंबी को नेस्तनाबूत करने का प्रयत्न करता है। दूसरे शब्दों में, एक धर्म व धर्मनीति जब मदांधता का वरण कर लेती है, तब वह 'सांप्रदायिकता' कहलाने लगती है। उसमें दूसरे धर्मों व जीवनदर्शनों की मान्यताओं के प्रति असहिष्णुता तीव्रतर होती है। इसका प्रभाव इतना भयंकर होता है कि हम मानव–धर्म भूलकर मानव–कृत धर्म को सर्वोपरि मानने लगते हैं।

बदला लेने की भावना को कभी भी श्रेयस्कर धर्म या पंथ नहीं कहा जा सकता। समान धर्मावलंबियों का दल बनाकर मारकाट आरंभ कर देना किसी भी धर्म का आदेश या सीख नहीं है। इस प्रकार 'राष्ट्रीयता' और 'सांप्रदायिकता' मानव–दर्शन के विपरीत मार्गी दो पक्ष हैं। किसी सांप्रदायिक भावना से संचालित व्यक्ति राष्ट्रीयता का समर्थक नहीं हो सकता। इसी प्रकार, राष्ट्रीयता का समर्थक कभी भी सांप्रदायिक नहीं हो सकता। वह भारत में रहने वाले सभी धर्मों, भाषाओं, जातियों आदि को समान दृष्टि से देखेगा। गांधी जी की प्रार्थना सभा में सभी धर्मों के अवतारों का नाम लेकर प्रार्थना की जाती थी।

आधुनिक युग में भी प्रचार तंत्र के कारण व्यक्ति सांप्रदायिक हो उठता है। कुछ ही लोग विवेकी होते हैं जिन पर संप्रदाय प्रभाव नहीं डाल पाता। धार्मिक आधार पर बने पाकिस्तान में आज भी भयंकर मारकाट मची रहती है। दूसरे शब्दों में कहा जाए तो राष्ट्रीयता से व्यक्ति का समग्र कल्याण होता है, जबकि सांप्रदायिकता से फूट और विघटनकारी तत्वों का जन्म होता है। राष्ट्रीयता में अहिंसा समाविष्ट होती है जबकि सांप्रदायिकता में हिंसा और संकुचित दृष्टि जैसे प्राणघाती तत्व निहित होते हैं।

8. **(क)** नए अथवा अप्रत्याशित विषयों पर लेखन में अनेक बाधाएँ आती हैं – किसी भी लेखक के लिए लेखन एक सतत प्रक्रिया है –नियमित स्वाध्याय और नियमित लेखन अनिवार्य शर्त है –सामान्य रूप से लेखक आत्मनिर्भर होकर अपने विचारों को लिखित रूप देने का अभ्यास नहीं करता। लेखक में मौलिक प्रयास तथा अभ्यास करने की प्रवृत्ति का अभाव होता है। लेखक के पास विषय से संबंधित सामग्री और तथ्यों का अभाव होता है। लेखक की चिंतन शक्ति मंद पड़ जाती है। लेखक के बौद्धिक विकास के अभाव में भाव विचारों और शब्दाभिव्यक्ति का समन्वय असंतुलित हो जाता है है।

(ख) रेडियो नाटक सुनने को ध्यान में रख कर लिखा जाता है जबकि सिनेमा और रंग मंच के लेखन को दृश्य के आधार पर लिखा जाता है। रेडियो नाटक में भाव भंगिमा का ध्यान रखने की आवश्यकता नहीं होती किन्तु सिनेमा और रंग मंच के लेखन में भाव भंगिमा का विशेष ध्यान रखा जाता है। रेडियो नाटक में मंच सज्जा पर ध्यान देने की आवश्यकता नहीं होती है किन्तु सिनेमा और रंग मंच के लेखन में मंच सज्जा पर बहुत अधिक ध्यान देने की आवश्यकता होती है

(ग) नाट्य रूपान्तरण करते समय कहानी के पात्रों की दृश्ययत्मकता का नाटक के पात्रों से मेल होना चाहिए। पात्रों की भावभंगिमाओं तथा उनके व्यवहार कर भी उचित ध्यान रखना चाहिए। पात्र घटनाओं के अनुरूप मनोभावों को प्रस्तुत करने वाले होने चाहिए। पात्र अभिनय के अनुरूप होने चाहिए। पात्रों का मंच के साथ मेल होना चाहिए।

9. (क) हम सूचनाएँ या समाचार जानना चाहते हैं। क्योंकि सूचनाएँ अगला कदम तय करने में हमारी सहायता करती हैं। इसी तरह हम अपने पास–पड़ोस, शहर, राज्य और देश–दुनिया के बारे में जानना चाहते हैं। ये सूचनाएँ हमारे दैनिक जीवन के साथ–साथ पूरे समाज को प्रभावित करती हैं। आज देश–दुनिया में जो कुछ हो रहा है, उसकी अधिकांश जानकारी हमें समाचार माध्यमों से मिलती है। हमारे प्रत्यक्ष अनुभव से बाहर की दुनिया के बारे में हमें अधिकांश जानकारी समाचार माध्यमों द्वारा दिए जाने वाले समाचारों से ही मिलती है। प्रेरक और उत्तेजित करने वाली हर घटना समाचार कहलाती है।

(ख) निकटता किसी भी समाचार संगठन में किसी समाचार के महत्त्व का मूल्यांकन अर्थात उसे समाचार पत्र या बुलेटिन में शामिल किया जाएगा या नहीं, इसका निर्धारण इस आधार पर भी किया जाता है कि वह घटना उसके कवरेज क्षेत्र और पाठक, दर्शक, श्रोता समूह के कितने करीब हुई है? हर घटना का समाचारीय महत्त्व काफ़ी हद तक उसकी स्थानीयता से भी निर्धारित होता है।ज़ाहिर है सबसे करीब वाला ही सबसे प्रिय भी होता है। यह मानव स्वभाव है। स्वाभाविक है कि लोग उन घटनाओं के बारे में जानने के लिए अधिक उत्सुक होते हैं जो उनके करीब होती हैं। लेकिन यह निकटता भौगोलिक नज़दीकी के साथ–साथ सामाजिक–सांस्कृतिक नज़दीकी से भी जुड़ी हुई है। यही कारण है कि हम अपने शहर और आसपास के क्षेत्रों के अलावा अपने राज्य और देश के अंदर क्या हुआ, यह जानने को उत्सुक रहते हैं। हम अपने देशवासियों से सामाजिक–सांस्कृतिक रूप से जुड़े हुए हैं, चाहे वे हमसे सैकड़ों मील दूर बैठे हों।

यही नहीं, इस सांस्कृतिक निकटता के कारण हम विदेशों में बसे भारतीयों से जुड़ी घटनाओं को भी जानना चाहते हैं लेकिन एक जैसी महत्त्व की दो घटनाओं में से स्थानीय समाचार पत्र में उस घटना के खबर बनने की संभावना ज़्यादा है जो उसके पाठकों के ज्यादा करीब हई है। इसका एक कारण तो करीब होना है और दूसरा कारण यह भी है कि उसका असर उन पर भी पड़ता है।

(ग) विभिन्न समाचार संगठनों की समाचारों के चयन और प्रस्तुति को लेकर एक नीति होती है। इस नीति को 'संपादकीय नीति' भी कहते हैं। संपादकीय नीति का निर्धारण संपादक या समाचार संगठन के मालिक करते हैं। समाचार संगठन, समाचारों के चयन में अपनी संपादकीय नीति का भी ध्यान रखते हैं। लेकिन इसका अर्थ यह नहीं है कि वे केवल संपादकीय नीति के अनुकूल खबरों का ही चयन करते हैं बल्कि वे उन खबरों को भी चुनते हैं जो संपादकीय नीति के अनुकूल नहीं है। यह ज़रूर हो सकता है कि संपादकीय लाइन के प्रतिकूल खबरों को उतनी प्रमुखता न दी जाए जितनी अनुकूल खबरों को दी जाती है।

10. (क) कवि के व्यक्तिगत जीवन में भी अन्य सांसारिक लोगों की तरह जीवन के दायित्वों का भार है। किन्तु उसका हृदय सभी के लिए प्रेमभाव से परिपूर्ण है। कवि का हृदय व्यक्तिगत पीड़ा से भरा हुआ है, वह विरह वेदना व्यथित है, वह भीतर ही भीतर रोता है किन्तु उसके दुःख से कोई दुखी न हो इसलिए बाह्य रूप से हँसता रहता है। कवि ने जहाँ एक ओर संसार को अपूर्ण, मूढ़, और स्वार्थपूर्ण कहा हैं, उसी संसार के लिए अपनी कलम से प्रेम का गीत लिखते है और वाणी से प्रेम का सन्देश सुनाते हैं, खुशियाँ बांटना चाहते हैं। कविता में व्यक्त भाव कवि की द्विधात्मक और द्वन्द्वात्मक स्थिति को उद्घाटित कराती है।

(ख) सावन और भादो माह में आसमान घने काले बादलों से आच्छादित रहता हैं, यदा–कदा बरसात होती रहती हैं। मगर शरद ऋतु के आते ही प्रकृति और आसमान दोनों ही एकदम साफ , स्वच्छ व निर्मल हो जाते हैं। प्रकृति के साथ–साथ बच्चों भी एक नये उत्साह व उमंग से भर जाते है और वो अपनी रंग–बिरंगी पतंगों लेकर अपने–अपने घरों की छतों में पहुंच जाते हैं। जो उल्लास और उमंग प्रकृति में दिखाई देता है, वैसा ही उल्लास और उमंग बच्चों में देखा जा सकता है–

(ग) कवि के लिए कागज का पन्ना एक चौकोर खेत की तरह है। जिस तरह अंधड़ के साथ कोई बीज मिटटी में आकर मिल जाता है, उसी प्रकार तत्कालिक सामाजिक स्थिति का कोई भाव या विचार कवि के मन–मस्तिष्क में आता है – जिस तरह बीज मिटटी के साथ रासायनिक क्रिया कर अंकुरित होता है, उसी प्रकार कवि भाव अथवा विचार के कल्पना का समावेश करता है और कागज रुपी खेत में शब्द रुपी अंकुर प्रस्फुटित होने लगते है – अंकुरविकसित होकर पौधे में परिवर्तित होने लगता है और फूल – पत्तों से सुशोभित होने लगता है, – इसी प्रकार अलंकार प्रयोग से कवि की कविता भी सौन्दर्य धारण करने लगती है। पौधा विकसित होकर वृक्ष का रूप धारण करता है, उसमे रसीलें फल लगते हैं। उसी प्रकार जब कवि की रचना पूर्ण काव्य रूप में प्रकाशित होती, पाठक जब उस काव्य रचना का श्रवण अथवा वाचन करता है, पाठक अथवा श्रोता को आत्मिक आनद की अनुभूति होती है।

11. (क) राम और लक्ष्मण भले ही एक माँ से पैदा नहीं हुए थे, परंतु वे सबसे ज्यादा एक–दूसरे के साथ रहे। राम अपनी माताओं में कोई अंतर नहीं समझते थे। लक्ष्मण सदैव परछाई की तरह राम के साथ रहते थे। उनके जैसा त्याग सहोदर भाई भी नहीं कर सकता था। इसी कारण राम ने कहा कि लक्ष्मण जैसा सहोदर भाई संसार में दूसरा नहीं मिल सकता।

(ख) भोर के नभ को राख से लीपा हुआ चौका इसलिए कहा है, क्योंकि चौके को लीपने के बाद उसमे कुछ देर तक नमी रहती है, वातावरण में भी भोर के समय नमी होती है। चौके की वातावरण की नमी में साम्य स्थापित करने के लिए कवि ने भोर को राख से लीपा हुआ कहा है।

(ग) माँ अपने बच्चे को साफ–स्वच्छ पानी से नहलाती है फिर बच्चे के उलझे बालों में कंघी कर उन्हें सुलझाती है। तत्पश्चात जब माँ बच्चे को अपने घुटनों के बीच बिठा कर कपड़े पहनाती है, तो बच्चा टकटकी लगाकर बड़े प्यार से अपनी माँ के चेहरे को देखने लगता हैं। बच्चे का इस तरह अपनी ओर देखता देख माँ अव्यक्त सुख की अनुभूति से भर जाती है।

12. (क) जेठ मास भी जा चुका था और अब तो आषाढ़ के भी पंद्रह दिन बीत चुके थे। कुएँ सूखने लगे थे, नलों में पानी नहीं आता था। खेत की माटी सूख–सूखकर पत्थर हो गई थी। पपड़ी पड़कर अब खेतों में दरारें पड़ गई थीं। झुलसा देने वाली लू चलती थी। ढोर–ढंगर प्यास से मर रहे थे, गली–मोहल्ला, गाँव–शहर हर जगह लोग गरमी से भुन–भुन कर त्राहिमाम–त्राहिमाम कर रहे थे। आकाश में बादलों का दूर – दूर तक कोई नमो–निशान नहीं था।

(ख) ज्येष्ठ माँस में सूरज किरणों की जगह आग बरसा रहा होता है, धरती तवे की तरह तप रही होती है, लू के गर्म–गर्म थपेड़े चल रहे होते हैं। ऐसी भीषण गर्मी में भी शिरीष खिला रहता है। गांधीजी भी शिरीष की भांति अपने आदर्श और सिद्धांतों पर अडिग बने रहते थे। उस समय जब देश अंग्रेजों का गुलाम हुआ करता था। सर्वत्र मार–काट अग्निदाह, लूट–पात, खून खच्चर का बवंडर बह रहा था –गाँधी सत्य और अहिंसा के सिद्धांत से स्वतंत्रता चाहते थे। वें अंग्रेजों के विरुद्ध अंत तक सत्य और अहिंसा के सिद्धांत पर चलते रहे– अपने आदर्श और सिद्धांतों के प्रति अडिग बने रहे, ठीक शिरीष की तरह।

(ग) महादेवी ने भक्तिन के जीवन को चार परिच्छेदों में बाँटा हैं–

पहले परिच्छेद में भक्तिन के विवाह से पूर्व,जिसमे लेखिका ने भक्तिन के बचपन की घटना का वर्णन किया है, दूसरे परिच्छेद में ससुराल में सधवा के रूप में तीन बेटियों के जन्म देने के कारण सास और जेठानियों द्वारा किये दुर्व्यवहार का वर्णन किया गया है, तीसरे परिच्छेद में विधवा के रूप में जेठों और जेठों के लड़कों द्वारा किये षड्यंत्र का वर्णन किया है और चौथे परिच्छेद में लेखिका महादेवी की सेवा में व्यतीत हुए समय का वर्णन है।

13. (क) भक्तिन का जीवन प्रारंभ से ही दुखमय और संघर्षपूर्ण रहा । बचपन में ही माँ गुजर गई। विमाता से हमेशा सौतेला व्यवहार किया। विवाह के बाद तीन बेटियाँ जन्म देने के कारण सास व जेठानियों मिला तिरस्कार, उपेक्षा और दुर्व्यवहार झेलना पड़ा। परिवार से अलगाव के पश्चात् थोड़ी खुशियाँ आने लगी थी कि दुर्भाग्य ने उससे उसका पति छीन लिया। जेठों ने उसकी संपत्ति हड़पने का षडयंत्र किया, वह संघर्ष करती रही, जूझती रही। बेटियों का विवाह कर दिया किन्तु बड़ी बेटी का पति जिसे घर–जमाई बनाकर अपने पास रखा था, उसका भी देहांत हो गया। बड़ी बेटी विधवा हुई तो ससुरालवालों ने न चाहते हुए भी तीतर बाज़ युवक को दामाद रूप में स्वीकार करने के लिए विवश कर दिया तीतर बाज़ दामाद ने सब कुछ बरबाद कर दिया, लगान न चुकाने पर ज़मीदार से भी अपमानित हुई, जिसके कारण उसे अपना घर–गाँव छोड़ना पड़ा। इस तरह भक्तिन का जीवन प्रारंभ से अंत तक दुखों से भरा रहा।

(ख) लेखक ने अपने परिचित भगत जी चूरनवाले , अपने दो मित्रों से जुड़े प्रसंग और स्वयं के अनुभव से इस मान्यता को स्थापित किया हैं कि बाजार की जादुई ताकत मनुष्य को अपने वश में कर लेती है। यदि हम अपनी आवश्यकताओं को समझकर बाजार का उपयोग करें तो उसका लाभ उठा सकते हैं। इसके विपरीत, बाजार की चकाचौध में फंसकर मनुष्य असंतोष, तृष्णा और ईर्ष्या से घायल होकर सदा के लिए बेकार हो सकते हैं। लेखक ने बाजार का पोषण करने वाले अर्थशास्त्र को अनीतिशास्त्र औंधा और मायावी बतलाया है।

(ग) आदर्श समाज के तीन तत्व आवश्यक माने है 'भ्रातृता' 'स्वतंत्रता 'और 'समानता'। 'भ्रातृता' से अंबेडकरजी का आशय भाईचारे की भावना से है। जैसे एक भाई दूसरे का सहारा बनता है, वैसे ही एक नागरिक दूसरे नागरिक के प्रति बिना किसी भेदभाव किये भाईचारे का व्यवहार करें। समाज के सभी वर्ग इस प्रकार घुलमिल जाए जैसे दूध में पानी और पानी में दूध। कोई व्यक्ति एक–दूसरे का सहारा लिए या दिए बिना आगे नहीं बढ़ सकता। समाज में भाईचारे के कारण ही कोई परिवर्तन समाज के एक छोर से दूसरे छोर तक पहुँच सकता है। किसी भी देश के नागरिकों में परस्पर सद्भाव और सामूहिक उन्नति का प्रयास ही सच्चे अर्थों में लोकतंत्र है।